अध्याय 5

सांस्कृतिक परिवर्तन, पश्चिमीकरण, संस्कृतीकरण, धर्मनिरपेक्षीकरण एवं उत्तर आधुनिकीकरण

अध्ययन बिन्दु

- सांस्कृतिक परिवर्तन की अवधारणात्मक व्याख्या
- सांस्कृतिक परिवर्तन में समाज सुधार आंदोलन एवं संचार साधनों की भूमिका
- पश्चिमीकरण की व्याख्या एवं विशेषताएँ
- पश्चिमीकरण एवं सामाजिक परिवर्तन
- संस्कृतीकरण की अवधारणात्मक व्याख्या एवं विशेषताएँ
- संस्कृतीकरण की आलोचनात्मक व्याख्या
- धर्म निरपेक्षीकरण के कारण एवं उद्‌भव की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि
- उत्तर-आधुनिकीकरण तथा आधुनिकीकरण की अवधारणा
- उत्तर-आधुनिकीकरण एवं उत्तर आधुनिकतावाद

प्रस्तुत अध्याय में आप जान पाएँगे कि भारत में सामाजिक परिवर्तन लाने वाले विभिन्न कारक कौन से हैं?

- हमें सांस्कृतिक परिवर्तन को समझना होगा और यह जानना होगा कि क्यों सांस्कृतिक परिवर्तन को समझने के लिए संरचनात्मक परिवर्तन को जानने की आवश्यकता है।
- हम यह भी जानेंगे कि सांस्कृतिक परिवर्तनों में कैसे सामाजिक आंदोलनों तथा संचार साधनों ने अपनी भूमिका निभाई।
- पश्चिमीकरण की अवधारणा को समझते हुए हम भारतीय समाज पर इसके प्रभावों को जानने का प्रयास करेंगे।
- धर्मनिरपेक्षीकरण की अवधारणा एवं इसके उद्‌भव की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि जानने के साथ हम यह भी जानने की चेष्टा करेंगे कि धर्मनिरपेक्षीकरण का भारतीय समाज पर क्या प्रभाव पड़ा
- आधुनिकीकरण के अवधारणात्मक पहलू की व्याख्या एवं सामाजिकप रिवर्तनक ीप्र्क्रियाके रू पम`ें,उ सकीभ ूमिकाक ो समझना। उत्तर आधुनिकता एवं उत्तर आधुनिकीकरण के अवधारणात्मक पक्षों का विश्लेषण।

साँस्कृतिक परिवर्तन

साँस्कृतिकप रिवर्तनक ीअ वधारणाक ोह मत भीस हजतास` समझ सकते हैं जब हमें यह ज्ञात हो कि संरचनात्मक परिवर्तन क्या है? क्योंकि संरचनात्मक परिवर्तन की आधारभूमि पर खड़े होकर ही साँस्कृतिकप रिवर्तनअ ाकारल`ताह` ास ामान्यअ र्थम`` संरचनात्मक परिवर्तन' समाज की संरचना में परिवर्तन है। अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि 'सामाजिक संरचना' क्या है? विभिन्न समाजशास्त्रियों के अनुसार सामाजिक संरचना का अर्थ 'लोगों के संबंधों की वह सतत् व्यवस्था है जिसे कि सामाजिक रूप से स्थापित प्रारूप अथवा व्यवहार के प्रतिमान के रूप में सामाजिक संस्थाओं और संस्कृति के द्वारा परिभाषित और नियंत्रित किया जाता है।' जब भी किसी समाज की संरचनात्मक व्यवस्था में परिवर्तन होता है तो स्वाभाविक रूप से साँस्कृतिक परिवर्तन भी होता है क्योंकि संरचनात्मक व्यवस्था में परिवर्तन, मनुष्य के आचार, व्यवहार और मनोभावों में परिवर्तन करता है। समाज गतिशील है इसलिए समय के साथ परिवर्तन अवश्यंभावी है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि– भारत में साँस्कृतिक परिवर्तन के बारे में जानने के लिए देश के इतिहास के पन्नों का पलटना होगा। हमें यह भलीभांति विदित है कि देश में कालांतर में विभिन्न प्रकार के समूहों का उन विभिन्न क्षेत्रों पर शासन रहा है जो आज के आधुनिक भारत को निर्मित करते हैं लेकिन अन्य शासनों के इतर औपनिवेशक शासन अत्यधिक प्रभावशाली रहा और इसके कारण भारतीय सामाजिक व्यवस्था में गहरे परिवर्तन आए। उपनिवेशवाद चूँकि पूँजीवादी व्यवस्था पर आधारित था अत: इसने प्रत्यक्ष रूप से आर्थिक व्यवस्था को प्रभावित किया। अपने आर्थिक हित लाभ के लिए रेल के शुरूआत की जिससे आमजन की आवाजाही बढ़ी, परिणामस्वरूप दूर बसने वाले लोगों का एक दूसरे से सम्पर्क बढ़ा। इसके साथ ही साथ रोजगार की तलाश में लोग सरलता से शहरों की ओर पलायन करने लगे। नतीजन औद्योगीकरण एवं नगरीकरण को बढ़ावा मिला। औद्योगीकरण का मतलब केवल मशीनों पर आधारित उत्पाद ही नहीं है बल्कि इसके फलस्वरूप नए सामाजिक संबंधों एवं नवीन सामाजिक समूहों का भी उद्‌भव एवं विकास भी है।

समाज सुधार आन्दोलन और साँस्कृतिक परिवर्तन– औपनिवेशिक शासन के प्रभाव की उत्पत्ति उन दो घटनाओं की परिणति है जो कि परस्पर संबंधित है। पहली घटना 19वीं शताब्दी के समाज सुधारकों एवं दूसरी प्रारंभिक 20वीं शताब्दी के राष्ट्रवादी नेताओं के सुनियोजितए वंअ थकप्र्यासस`ज ुड़ीह ुईह` ास माजस ुधारकोंए वं राष्ट्रवादी नेताओं का मूल उद्देश्य उन सामाजिक व्यवहारों में परिवर्तन

लाने का था जो महिलाओं एवं वंचित समूहों के साथ भेदभाव करते थे। समाज सुधारकों ने धार्मिक ग्रंथों को आधार बनाकर उन कुरीतियों पर कुठाराघात किया, जो कि धर्मग्रंथों की स्वार्थहित, अपूर्ण एवं अनर्थपूर्ण व्याख्याओं के कारण पूर्व में स्त्रियों एवं जातिगत भेदभाव का शिकार बनी जातियों के शोषण का कारण बनी थी। सती प्रथा, बाल-विवाह, विधवा पुर्नविवाह निषेध और जाति भेद कुछ इस प्रकार की कुरीतियाँ थीं जिन्होंने स्त्री और वंचित वर्ग से उनके मानवोचित अधिकारों को भी छीन लिया था। ऐसा नहीं है कि उपनिवेशवाद से पूर्व भारत में सामाजिक विभेदों के विरुद्ध आवाज न उठी हो। बौद्ध धर्म के केन्द्र में समानता के स्वर उठे। ऐसे ही कुछ प्रयास भक्ति एवं सूफी आंदोलनों के समय में भी हुए।

उन्नीसवीं सदी में हुए समाज सुधारों ने अपना प्रभाव इसलिए स्थापित किया क्योंकि उसमें आधुनिक विचारों को प्राचीन साहित्य से सार्थकता पूर्ण रूप से जोड़ने की चेष्टा की गई। जैसे राजाराम मोहन राय ने 'सती प्रथा' का विरोध करते हुए उसे मानवीय हितों के हनन के रूप में प्रस्तुत करने के लिए न केवल आधुनिक सिद्धान्तों का आश्रय लिया अपितु उन्होंने हिंदू शास्त्रों का भी संदर्भ दिया। इसी तरह रानाडे ने विधवा विवाह के समर्थन में शास्त्रों का संदर्भ दिया। उन्होंने वेदों के उन पक्षों को उल्लेखित किया जो विधवा पुनर्विवाह को स्वीकृति प्रदान करते हैं।

संचार माध्यम और साँस्कृतिक परिवर्तन– हमें यह समझना होगा कि समाजसुधारकों के अथक प्रयासों ने 19वीं सदी के सांस्कृतिक परिवर्तनों में एक महत्ती भूमिका निभाई तथा कथित परम्पराओं का आवरण ओढ़े, समाज की सोच को परिवर्तित कर उनके आचार और व्यवहार को समाजसुधारकों ने एक नवीन और सकारात्मक दिशा दी जो कि मूलत: सांस्कृतिक परिवर्तनों को परिलक्षित करता था। समाज सुधारकों के विचारों को समस्त भारत में फैलाने में संचार माध्यमों का योगदान उल्लेखनीय रहा। समाजशास्त्री सतीश सबरवाल ने औपनिवेशिक भारत में आधुनिक परिवर्तनों की रूपरेखा से जुड़े तीन पक्षों की चर्चा की–

1. संचार माध्यम
2. संगठनों के स्वरूप तथा
3. विचारों की प्रकृति

संचार के विभिन्न स्वरूपों को गति नवीन प्रौद्योगिकी के फलस्वरूप प्राप्त हुई। प्रिंटिंग प्रेस, टेलीग्राफ तथा माइक्रोफोन ने जहाँ आमजन तक बुद्धिजीवियों, समाज सुधारकों एवं राष्ट्रवादी नेताओं के विचारों को पहुँचाया वहीं रेल के जरिये भी भारत के कोने-कोने तक बुद्धिजीवियों के विचार पहुँच रहे थे। भारत में पंजाब और बंगाल के समाजसुधारकों के विचार-विनिमय मद्रास और महाराष्ट्र के समाज सुधारकों से होने लगे। 1864 में बंगाल के केशवचन्द्र सेन ने मद्रास का दौरा किया। पंडिता रमाबाई ने जनजागृति उत्पन्न करने के लिए अनेक क्षेत्रों का दौरा किया। बौद्धिक आधारों ने सुधार आंदोलनों को वैचारिक धरातल प्रदान किया उनमें धार्मिक सार्वभौमिकता, मानववाद एवं तर्कवाद प्रमुख थे। नवीन प्रौद्योगिकी तथा संगठन जिन्होंने संचार के विभिन्न स्वरूपों को गति प्रदान की, ने सांस्कृतिक व्यवहारों में भी परिवर्तन किया। तत्कालीन समय में सक्रिय सामाजिक संगठनों ने जन जागृति के प्रयास किए। बंगाल में जहाँ ब्रह्म समाज की स्थापना हुई, वहीं पंजाब में आर्य समाज की। 1914 ई. में अंजुमन-ए-ख्वातीन-ए-इस्लाम की स्थापना हुई। ये भारत में मुस्लिम महिलाओं की राष्ट्र स्तरीय संस्था थी।

समाज सुधारकों ने सभाओं व गोष्ठियों के माध्यम से तो अपने विचारों को आमजन तक पहुँचाया ही परन्तु इसके साथ ही साथ जनसंचार के माध्यमों ने सामाजिक विषयों पर चर्चाएँ ज्वलंत रखीं। शनै:-शनै: समाजसुधारकों द्वारा कही गई बातें जनमानस की विचारधाराएँ बदल रही थीं। उनके लिखे हुए विचार, विभिन्न भाषाओं में अनुवादित होकर समस्त भारत को सामाजिक एवं मानवीय आधार पर विशेषकर वंचित समूहों को प्रथम श्रेणी पर लाकर खड़ा करने की सुदृढ़ आधारभूमि दे रहे थे। उदारवाद एवं स्वतंत्रता के नवीन विचार, परिवार रचना एवं विवाह से संबधित क्रांतिकारी विचारों ने सामाजिक संस्तरण में 'स्त्री' की प्रस्थिति को उच्च किया। महत्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि इन समाजसुधारकों ने प्राचीन परम्पराओं को संजोते हुए नवीन एवं आधुनिक विचारों को समावेशित करने का प्रयास किया। महिलाओं को शिक्षा का अधिकार मिले, इस विषय पर भी चिंतनमनन हुआ। ईश्वरचंद्र विद्यासागर, नारी शिक्षा के समर्थक थे। उनके प्रयास से ही कलकत्ता तथा अन्य स्थानों में अनेक बालिका विद्यालय खुले। सामाजिक कुप्रथाओं एवं वंचित लोगों के अधिकार का संघर्ष किसी धर्म सम्प्रदाय तक सीमित नहीं था। मुस्लिम समाज सुधारकों ने बहुविवाह और पर्दा प्रथा के विरोध में आवाज उठाई। जहाँआरा शाह नवास ने अखिल भारतीय मुस्लिम महिला सम्मेलन में, बहु विवाह के विरुद्ध प्रस्ताव प्रस्तुत किया। बहुविवाह के विरुद्ध लाए गए प्रस्ताव का पंजाब से निकलने वाली महिलाओं की एक पत्रिका 'तहसिब-ए-निसवान' ने समर्थन किया। इसी तरह सर सैयद अहमद खान ने इस्लाम की विवेचना की और उसमें स्वतंत्र अन्वेषण की वैधता (इजतिहाद) का उल्लेख किया। उन्होंने कुरान में लिखी गई बातों और आधुनिक विज्ञान द्वारा स्थापित प्रकृति के नियमों में समानता जाहिर की।

यह स्पष्ट है कि सामाजिक संगठनों एवं समाज सुधारकों ने उन सामाजिक कुरीतियों पर चोट की, जिन्होंने स्त्रियों और वंचित समूहों को समाज की मुख्यधारा से पीछे धकेल दिया। उन्नीसवीं सदी में हुए समाज सुधार आंदोलन ने आमजन की सोच को परिवर्तित किया। स्त्री शिक्षा के प्रति चेतनता, विधवा पुनर्विवाह, बाल विवाह के प्रति रुझान में कमी इसी बात का संकेत है। इस आंदोलन का एक महत्वपूर्ण पक्ष ये भी रहा कि इसने देश की आधी आबादी को उनके अधिकारों के प्रति ही जागरुक नहीं किया, बल्कि उन्होंने उनकी दबी हुई शक्तियों को पुनर्जीवित करने के लिए प्रेरित किया।

उन्नीसवीं सदी में हुए इन सामाजिक आंदोलनों ने देश के सांस्कृतिक स्वरूप को परिवर्तित कर दिया। नवीन विचारधाराओं,

मानवीय समन्वयता एवं समानता के भाव का संरक्षण एवं परिवहन, उदारतावाद का विकास भारतीय सांस्कृतिक परिवर्तन का उदाहरण बनकर उभरा और इन्हीं सांस्कृतिक व्यवहारों में हुए परिवर्तन को संस्कृतीकरण, आधुनिकीकरण, लौकिकीकरण तथा पश्चिमीकरण की प्रक्रियाओं के रूप में समझा जा सकता है।

पश्चिमीकरण

पश्चिमीकरण का तात्पर्य उस पश्चिमी उप सांस्कृतिक प्रतिमान से है जिसे भारत के कुछ लोगों ने आत्मसात किया। ये वे लोग थे जो पश्चिमी संस्कृति के सम्पर्क में आए थे। इसमें विशेषकर देश का मध्यमवर्गीय एवं बुद्धिजीवी वर्ग सम्मिलित था, जिसने न केवल पश्चिमी प्रतिमान चिंतन के प्रकार एवं जीवनशैली को अपनाया अपितु साथ ही साथ इसका समर्थन तथा विस्तार भी किया।

पश्चिमीकरण को परिभाषित करते हुए योगेन्द्र सिंह ने कहा था 'मानववाद तथा बुद्धिवाद पर जोर पश्चिमीकरण है, जिसने भारत में संस्थागत तथा सामाजिक सुधारों का सिलसिला प्रारम्भ कर दिया। वैज्ञानिक, औद्योगिक एवं शिक्षण संस्थाओं की स्थापना राष्ट्रीयता का उदय, देश में नवीन राजनीतिक संस्कृति और नेतृत्व सब पश्चिमीकरण के उपोत्पादन है।'

पश्चिमीकरण की व्याख्या– एम. एन. श्रीनिवास ने पश्चिमीकरण के संबंध में लिखा है–''अंग्रेजी शासन के कारण भारतीय समाज और संस्कृति में बुनियादी और स्थायी परिवर्तन हुए। यह काल भारतीय इतिहास के पिछले सभी कालों से भिन्न था, क्योंकि अंग्रेज अपने साथ नई औद्योगिकी, संस्थाएँ, ज्ञान, विश्वास और मूल्य लेकर आए थे। अंग्रेज अपने साथ छापेखाने भी लाए और इसने भारतीय जीवन और चिंतन में गंभीर तथा बहुविध परिवर्तन उत्पन्न किए।''

अंग्रेजों के शासन की लंबी कालावधि के फलस्वरूप भारतीय सामाजिक सांस्कृतिक व्यवस्था पर पड़े प्रभाव को श्रीनिवास ने पश्चिमीकरण नाम क्यों दिया यह उन्होंने स्वयं स्पष्ट किया है। वे कहते हैं, ''उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में अंग्रेजों ने जागरुक भारतीय जनमत के समर्थन में कुरीतियों को मिटाया, जैसे सती प्रथा (1829), बालिका हत्या, मानव बलि और दास प्रथा (1833)। संक्षेप में अंग्रेजों का भारत पर प्रभाव गहरा, बहुमुखी और फलदायी था। 150 वर्षों के अंग्रेजी राज के फलस्वरूप भारतीय समाज और संस्कृति में होने वाले परिवर्तनों के लिए मैंने पश्चिमीकरण शब्द का प्रयोग किया है और यह शब्द औद्योगिकी, संस्थाएँ, विचारधारा और मूल्य आदि विभिन्न स्तरों पर होने वाले परिवर्तनों को आत्मसात करता है। मैं यह कहना चाहता हूँ कि इसके अस्पष्ट और सर्वग्राही स्वरूप के बावजूद मैं जान बूझकर इसका प्रयोग कर रहा हूँ। किसी पश्चिमी देश के साथ दीर्घकालीन सम्पर्क के फलस्वरूप किसी गैर पश्चिमी देश में होने वाले परिवर्तनों के विश्लेषण में ऐसे शब्द की आवश्यकता है।''

सामान्य शब्दों में पश्चिमीकरण का अर्थ पश्चिमी देशों की सामाजिक संरचनाओं, सांस्कृतिक व्यवस्थाओं व मूल्यों का पूर्वी देशों द्वारा अपनायाज ाना इ सस ंदर्भम ेंअ गरह मभ ारतक ेब ातक रेंत ोअ न्य पश्चिमी देशों की अपेक्षाकृत भारतीय संस्कृति को इंग्लैण्ड ने प्रभावित किया और इसका कारण स्पष्ट था चूंकि अंग्रेज भारत वर्ष में एक बहुत लंबे अर्से तक रहे इसलिए जन मानस में उनकी जीवनशैली और संस्कृति का विशेष रूप से प्रभाव रहा।

पश्चिमीकरण की विशेषताएँ–

श्रीनिवास ने पश्चिमीकरण की अनेक विशेषताओं का उल्लेख किया है–

1. श्रीनिवास का मानना था कि पश्चिमीकरण का प्रभाव जीवन के हर क्षेत्र पर पड़ा है चाहे वह साँस्कृतिक क्षेत्र हो, राजनीतिक, धार्मिक या आर्थिक क्षेत्र।
2. श्रीनिवास ने अपनी पुस्तक 'आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन' में लिखा है ''पश्चिमीकरण एक अन्तर्भूतकारी संस्लिष्ट और बहुस्तरीय अवधारणा है। उसमें एक छोर पर पश्चिमीअ ौद्योगिकीस ेल गाकरद ूसरेछ ोरप रअ ाधुनिक विज्ञान और आधुनिक इतिहास लेखन तक विस्तृत क्षेत्र सम्मिलित हैं। उसकी अविश्वसनीय संस्लिष्टता इस बात से देखी जा सकती है कि पश्चिमीकरण के विभिन्न पक्ष कभी तो एक किसी प्रक्रिया विशेष को पुष्ट करते हैं, कभी एक दूसरे के विपरीत पड़ते हैं और कभी-कभी एक दूसरे से अलग रहते हैं।''
3. श्रीनिवास का मानना है कि पश्चिमीकरण का प्रभाव सभी पर समान मात्रा में नहीं पड़ता। यह एक ऐसी जटिल प्रक्रिया है कि किसी पर यह कितना प्रभाव डालेगी यह आंकलन नहीं किया जा सकता, स्वयं श्रीनिवास के शब्दों में ''पश्चिमीकरण का स्वरूप और गति एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में तथा जनसंख्या के एक भाग से दूसरे भाग में भिन्न-भिन्न रही है। लोगों का समूह अपनी वेशभूषा, भोजन के तरीकों, भाषा, खेलकूद और अपने द्वारा काम में ली जाने वाली वस्तुओं की दृष्टिस ेप श्चिमीकृतह ोग याह ै,ज बकिअ न्यस मूहोंन े पश्चिमी विज्ञान, ज्ञान तथा साहित्य को अपना लिया, जो बाह्य दृष्टि से पश्चिमीकरण से सापेक्ष रूप से मुक्त रहा।''
4. श्रीनिवास ने यह स्पष्ट किया है कि 'पश्चिमीकरण' शब्द का प्रयोग, मात्र परिवर्तन को दर्शाने के संबंध में प्रयुक्त हुआ है। इसका उद्देश्य अच्छे या बुरे को अभिव्यक्त करना नहीं है अर्थात् यह शब्द नैतिक दृष्टिकोण से तटस्थ है।
5. पश्चिमीकरण किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व के एक पक्ष को आंशिक या पूर्ण से प्रभावित करता है तो उसी अवधि में उसके व्यक्तित्व का दूसरा पक्ष पश्चिमीकरण से बिल्कुल प्रभावित नहीं होता। प्रो. श्रीनिवास ने अपनी पुस्तक से ऐसे

उदाहरण प्रस्तुत किए हैं। श्रीनिवास ने 1952 में मैसूर के रामपुर गांव में एक सरकारी बुलडोजर के चालक को एक खेत में जमीन को समतल करते देखा। वह चालक मनोरंजन के लिए गांव में पारम्परिक खेल भी दिखाया करता था। स्पष्ट है कि मनोरंजन के लिए जादू-टोने से संबंधित पारस्परिक खेल और जीविकोपोर्जन के लिए बुलडोजर चलाने में, उसे कोई असामान्यता नहीं दिखती थी।

6. पश्चिमीकरणके प्रभावस दैवप्रत्यक्षरू पस ेव यक्तिक ो प्रभावित करे ऐसा आवश्यक नहीं है। कई बार व्यक्ति इससे परोक्ष रूप से भी प्रभावित होते हैं।

पश्चिमीकरण और सामाजिक परिवर्तन– पश्चिमीकरण ने भारतीय समाज की सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवस्था को प्रभावित किया। पश्चिमीकरण के फलस्वरूप भारतीय समाज की परम्परागत संस्थाएँ प्रभावित हुई एवं नवीन संस्थाओं का जन्म हुआ। भारत में अंग्रेजी शासन व्यवस्था से पूर्व स्थापित शिक्षा के केन्द्र मूलत: पारम्परिक ज्ञान का प्रसार करते थे, परन्तु अंग्रेजी शासन के प्रभाव ने शिक्षा पद्धति को परिवर्तित किया, यद्यपि नवीन शिक्षा पद्धति का उद्देश्य एक ऐसे वर्ग को निर्मित करना था जो अंग्रेजी शासन की प्रशासनिक व्यवस्था में निचले स्तर पर कार्य कर सके तथापि इस शिक्षा पद्धति ने एक नवीन मध्यवर्ग का उदय करने में अपनी महत्ती भूमिका निभाई। एक ऐसा वर्ग जो परम्परागत संस्थाओं को परिवर्तित करने के लिए आतुर था।

भारतीय संस्कृति के पाश्चात्यकरण से पूर्व भोजन करने की परम्परा एक धामिक कृत्य मानी जाती थी। भोजन में पवित्रता के मानक स्थापित किए हुए थे। जैसे भोजन में प्रयुक्त पत्तलों को फेंक देने के पश्चात जूठी पत्तलों के स्थान को गोबर से लेपकर पवित्र किया जाता था। पश्चिमीकरण के फलस्वरूप कस्बों और शहरों में शिक्षा और पश्चिमीकृत समूहों ने जमीन पर बैठकर भोजन ग्रहण करने के बजाय टेबल और कुर्सी का प्रयोग शुरू कर दिया। स्वयं श्रीनिवास कहते हैं ''जिस बात पर मैं जोर देना चाहता हूँ वह यह है कि भोजन का नया ढंग लौकिकीकरण की वृद्धि में योग देता है, क्योंकि भोजन के बाद मेज को गोबर से पवित्र नहीं किया जा सकता और भोजन के पहले और बाद के पारम्परिक कर्मकाण्ड को छोड़ देने की प्रवृत्ति बढ़ती है।''

पश्चिमीकरण के फलस्वरूप राजनीतिक व सांस्कृतिक क्षेत्र में भी बदलाव आया। पश्चिमीकरण से न केवल राष्ट्रीयतावाद को अपितु जातिगत भेदभाव की शिथिलता को बल मिला साथ ही भाषायी चेतना और प्रादेशिकता के बीज भी प्रस्फुटित हुए।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में, सामाजिक परिवर्तन के संबंध में श्रीनिवास ने लिखा है ''भारतवासियों का बहुत ही छोटा सा अंश अंग्रेजों या अन्य यूरोपवासियों के सीधे सम्पर्क में आया और जो ऐसे सम्पर्क में आए भी, वे सदा परिवर्तन में सहायक नहीं हुए। उदाहरण के लिए अंग्रेजों के भारतीय नौकर-चाकरों का संभवत: अपने रिश्तेदारों या स्थानीय जाति समूहों में कुछ प्रभाव होता था, पर दूसरों पर नहीं। इसी प्रकार हिन्दू धर्म छोड़कर ईसाई बनाने वालों का भी संपूर्ण भारतीय समाज पर कोई विशेष प्रभाव न था क्योंकि एक तो ये लोग भी खास तौर पर निचली जातियों के थे और दूसरे धर्म-परिवर्तन उन्हें अधिकाँश हिन्दू समुदाय से पृथक कर देता था। अंत में ईसाई बनने से अक्सर उनका धर्म ही बदलता था, रीति रिवाज, सामान्य संस्कृति अथवा धर्म परिवर्तन करने वालों की सामाजिक स्थिति नहीं।''

पश्चिमीकरण का भारतीय साहित्य पर गहरा प्रभाव परिलक्षित होता दिखाई दिया। हिन्दी भाषी लेखक पाश्चात्य साहित्यकारों की भाषा और शैली से प्रभावित हुए। पश्चिमीकरण ने स्थापत्य कला, नृत्य और संगीत कला, चित्रकला तथा ललित कला को प्रभावित किया।

पश्चिमीकरण ने समाज में एक नवीन वर्ग को जन्म दिया जोकि अभिजात वर्ग के नाम से जाना गया। इस संबंध में श्रीनिवास ने लिखा है, ''पारम्परिक अभिजन और नए अथवा पश्चिमीकृत अभिजन के बीच कुछ निरंतरता है। यह निरंतरता दोहरे अर्थ में मौजूद है। एक पारम्परिक अभिजन के कुछ सदस्यों अथवा समुदायों ने अपने आपको नए अभिजन के रूप में ढाल लिया दूसरे पुराने और नए धंधों में भी कुछ निरंतरता है। निरंतरता के सरल उदाहरण ये है कि किसी ब्राह्मण पंडित के बेटे अपने पेशों में प्रवेश करें या किसी सरदार का बेटा भारतीय सेना में उच्च स्थान प्राप्त कर ले। यह सर्वथा स्वाभाविक है कि पश्चिमीकरण के पहले चरण में भारतीय अभिजन का प्रत्येक अंश पश्चिमीकरण का वह आदर्श चुने जो परम्परा से उसके सबसे समीप हो। उदाहरण के लिए बम्बई के पारसी नई परिस्थितियों का लाभ उठाने वाले सर्वप्रथम लोगों में थे, उन्होंने पेशों में, सरकारी नौकरियों में, उद्योग में, वाणिज्य और व्यवसाय में, विशेषकर शराब के व्यापार में प्रवेश किया और नागरिक तथा राष्ट्रीय जीवन में भी प्रमुख रहे।''

इसमें कोई संदेह नहीं कि पश्चिमीकरण ने भारतीय सामाजिक व्यवस्था को प्रभावित किया परन्तु विभिन्न स्तरों पर इनकी प्रभावशीलता को देखना उचित होगा, स्वयं श्रीनिवास ने पश्चिमीकरण शब्द के साथ प्रारम्भिक, माध्यमिक अथवा तृतीयक विशेषण प्रयुक्त किया। भारत में प्राथमिक पश्चिमीकरण का स्तर व्यतीत हो चुका है। देश का ग्रामीण क्षेत्र पश्चिमीकरण के माध्यमिक स्तर पर है तथा नगरीय क्षेत्र एवं महानगरीय संस्कृति ने पश्चिमीकरण के माध्यमिक एवं तृतीयक स्तर के मध्य से गुजर रही है। पूर्ण पश्चिमीकरण, भारतीय संस्कृति आत्मसात कर पाएगी ऐसा संदेहास्पद है क्योंकि भारतीय संस्कृति ने हजारों वर्षों से अपनी मौलिकता को बनाए हुए रखा है।

संस्कृतीकरण

भारतीय सामाजिक व्यवस्था की एक अद्वितीय विशेषता 'जाति व्यवस्था' को माना गया है। जाति प्रथा मूलत: संस्तरण पर आधारित भारतीय सामाजिक स्तरीकरण का एक प्रमुख स्वरूप है। अर्थात यहाँ एक

जाति दूसरी जाति की तुलना में उच्च या निम्न मानी गई है। इन्हीं जातियों के संबंध में एक विस्तृत अध्ययन देश के समाजशास्त्री एम. एन. श्रीनिवास ने किया। श्रीनिवास ने जातिगत संस्तरण व्यवस्था को विवेचित करने के लिए समाज के वंचित समूह के लिए 'निम्न जाति' शब्द का प्रयोग किया। श्रीनिवास ने दक्षिण भारत के कुर्ग लोगों के सामाजिक और आर्थिक जीवन के विश्लेषण के लिए 1952 में संस्कृतीकरण की अवधारणा का सर्वप्रथम प्रयोगा कया।2 0वींश ाताब्दीके म ध्यत कज ाति० यवस्थाक ाम ूलत: अध्ययन वंशानुक्रम या शुद्धता और अशुद्धता की धारणा अथवा 'वर्ण व्यवस्था' पर आधारित प्रस्थिति के अर्थों में होता था,परन्तु श्रीनिवास ने जाति व्यवस्था को 'उर्ध्वमुखी गतिशीलता' के आधार पर विवेचित करने का प्रयास किया।

संस्कृतीकरण की अवधारणा से पूर्व यह माना जाता रहा था कि जाति व्यवस्था जन्म पर आधारित कठोर व्यवस्था है जिसमें परिवर्तन संभव नहीं है। इस तथ्य की पुष्टि एस. वी. केतकर के जाति के संबंध में की गई व्याख्या से होती है। केतकर ने अपनी पुस्तक 'हिस्ट्री ऑफ कास्ट इन इंडिया' में लिखा है कि "एक जाति की सदस्यता केवल उन व्यक्तियों तक ही सीमित होती है जो कि उस जाति विशेष के सदस्यों से ही पैदा हुए हैं।" कुछ इसी तरह के विचार समाजशास्त्री मजूमदार एवं मदान के भी हैं, उन्होंने कहा कि "जाति एक बंद वर्ग है।" इन सुस्थापित मान्यताओं के विपरीत श्रीनिवास ने माना कि जाति व्यवस्था लचीली व्यवस्था है, इसमें गतिशीलता संभव है और यह आवश्यक नहीं कि प्रत्येक जाति की स्थिति सदैव के लिए एक सी निश्चित हो।

संस्कृतीकरण की अवधारणा– श्रीनिवास ने संस्कृतीकरण को परिभाषित करते हुए कहा, "एक ऐसी प्रक्रिया जिसके द्वारा निम्न जातियाँ उच्च जातियों, विशेषकर ब्राह्मणों के रीति रिवाजों, संस्कारों, विश्वासों, जीवन विधि एवं अन्य सांस्कृतिक लक्षणों व प्रणालियों को ग्रहण करती हैं।" श्रीनिवास का मानना है कि "संस्कृतीकरण की प्रक्रिया अपनाने वाली जाति, एक-दो पीढ़ियों के पश्चात् ही अपने से उच्च जाति में प्रवेश करने का दावा प्रस्तुत कर सकतीहै।"

श्रीनिवास यह भी कहते हैं कि "किसी भी समूह का संस्कृतीकरण उसकी प्रस्थिति को स्थानीय जाति संस्तरण में उच्चता की तरफ ले जाता है। सामान्यता यह माना जाता है कि संस्कृतीकरण संबधित समूह की आर्थिक अथवा राजनीतिक स्थिति में सुधार है अथवा हिन्दुत्व की महान परंपराओं का किसी स्त्रोत के साथ संपर्क होता है। परिणामस्वरूप उस समूह में उच्च चेतनता का भाव उभरता है। महान परंपराओं के यह स्त्रोत कोई तीर्थस्थल हो सकता है, कोई मठ हो सकता है अथवा कोई मतांतर वाला संप्रदाय हो सकता है।"

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि संस्कृतीकरण एक ऐसी प्रक्रिया की ओर संकेत करता है जिसमें कोई जाति या समूह सांस्कृतिक दृष्टि से प्रतिष्ठित समूह के रीतिरिवाज एवं नामों का अनुकरण कर अपनी सामाजिक प्रस्थिति को उच्च बनाते हैं।

संस्कृतीकरण की विशेषताएँ–

1. श्रीनिवास ने यह स्पष्ट किया है कि संस्कृतीकरण की प्रक्रिया में सदैव ब्राह्मण जाति का ही अनुकरण किया जाएगा ऐसा नहीं है, क्योंकि इस प्रक्रिया में स्थानीय प्रभुत्व सम्पन्न जाति भी बहुत महत्वपूर्ण है। स्पष्टत: संस्कृतीकरण की अवधारणा को आर्थिक एवं राजनीतिक प्रभुत्व से भी जोड़ कर देखा गया एवं स्थानीय प्रबल जाति की भूमिका को परिवर्तन के सांस्कृतिक संचरण में विशेष महत्व दिया गया।
2. श्रीनिवास ने यह माना है कि संस्कृतीकरण दोतरफा प्रक्रिया है क्योंकि इस प्रक्रिया में उच्च जाति की प्रस्थिति को प्राप्त करने हेतु प्रयत्नशील जाति जहाँ उच्च जाति से बहुत कुछ प्राप्त करती है या सीखती है वही उसे कुछ प्रदान भी करती है। इस संबंध में श्रीनिवास ने उदाहरण देते हुए कहा है कि संपूर्ण भारत में, सर्वमान्य एवं प्रतिष्ठित देवी-देवताओं के अलावा कुछ स्थानीय देवताओं की पूजा भी ब्राह्मण करते थे। जिससे महामारियों से उनकी रक्षा हो सके तथा पशुधन, बच्चों के जीवन व अन्न आदि भी संरक्षित रहे।
3. संस्कृतीकरण सामाजिक गतिशीलता की व्यक्तिगत क्रिया न होकर एक सामूहिक प्रक्रिया है।
4. संस्कृतीकरण की प्रक्रिया में केवल 'पदमूलक' परिवर्तन ही होते हैं। कोई संरचनात्मक मूलक परिवर्तन नहीं। अर्थात एक जाति अपने आसपास की जातियों से जातिगत संस्तरण में अपनी प्रस्थिति उच्च कर लेती है परन्तु इससे सामाजिक व्यवस्था में कोई परिवर्तन नहीं होता।
5. संस्कृतीकरण की प्रक्रिया एक लंबी अवधि की प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में उच्च जाति की प्रस्थिति को प्रयासरत जाति को एक लंबे समय तक प्रतीक्षा करनी होती है और इस अवधि में उसे अपने दावे के लिए निरंतर दबाव बनाए रखना पड़ता है।
6. संस्कृतीकरण के फलस्वरूप लौकिक तथा कर्मकाण्डीय स्थिति के मध्य पाए जाने वाली असमानता को दूर करना है। जब किसी जाति अथवा उसके एक भाग को लौकिकशक्ति प्राप्त हो जाती है, तो वह साधारणत: उच्च प्रस्थिति के परम्परागत प्रतीकों को प्राप्त करने का प्रयत्न भी करती है।

संस्कृतीकरण के प्रोत्साहन के कारक– संस्कृतीकरण की प्रक्रिया का संभव बनाने वाले अनेक कारक रहे हैं। ये वे कारक हैं जिन्होंने किसी न किसी प्रकार से संस्कृतीकरण को बल दिया।

1. संचार एवं यातायात के साधनों का विकास– संचार एवं यातायात के साधनों के विकास के फलस्वरूप दूर फैले लोगों का एक दूसरे से सम्पर्क बढ़ा, यहाँ तक कि अगम्य माने जाने वाले क्षेत्रों में भी अब प्रवेश संभव हो गया, जिसके चलते संस्कृतीकरण की प्रक्रिया तीव्र

हो गई।

2. कर्मकांडी क्रियाओं में सुलभता– श्रीनिवास ने कर्मकाण्डी क्रियाओं से मंत्रोच्चारण की पृथकता को संस्कृतीकरण का एक प्रमुख कारक माना। मंत्रोच्चारण की पृथकता के कारण ब्राह्मणों के संस्कार सभी हिन्दू जातियों के लिए सुलभ हो गए। ब्राह्मणों द्वारा कथित निम्न (गैर द्विज) जातियों पर वैदिक मंत्रोच्चारण पर प्रतिबंध लगाया गया था। इस प्रकार निम्न जाति के लोग भी ब्राह्मणों के सामाजिक आचार-विचार को सरलता से अपना सके।

3. राजनीतिक प्रोत्साहन– श्रीनिवास के मतानुसार संसदीय प्रजातांत्रिक० यवस्थान ेभ ीस ंस्कृतीकरणक ोब ढ़ावा दिया।ध र्मए वं जातिगत आधार पर हर प्रकार के विभेद की समाप्ति ने वर्षों से निर्योग्यताओं से लादे गए वंचित समूहों को समाज की मुख्यधारा में लाकर खड़ा किया।

संस्कृतीकरण का आलोचनात्मक विश्लेषण– श्रीनिवास ने संस्कृतीकरण की अवधारणा की विशुद्ध विवेचना की परन्तु उनकी इस अवधारणा से अनेक विद्वानों ने अपनी असहमति प्रकट की। यहाँ तक कि स्वयं श्रीनिवास ने इस सत्य को स्वीकार किया कि संस्कृतीकरण की अवधारणा सहज नहीं है। वे लिखते हैं कि ''संस्कृतीकरण एक विषम एवं जटिल अवधारणा है। यह भी संभव है कि इसे एक अवधारणा मानने के बजाय अनेक अवधारणाओं का योग मानना अधिक लाभप्रद रहेगा। यहाँ ध्यान रखने योग्य बात यह है कि व्यापक सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रक्रिया के लिए यह केवल एक नाम है और हमारा प्रमुख कार्य इन प्रक्रियाओं की प्रकृति को समझना है। जैसे ही यह पता चले कि 'संस्कृतीकरण' शब्द विश्लेषण में सहायता पहुँचाने के बजाय बाधक है, उसे निस्संकोच और तुरन्त छोड़ दिया जाना चाहिए।''

संस्कृतीकरण की अवधारणा को विवेचित करते हुए श्रीनिवास ने स्पष्ट किया कि संस्कृतीकरण की प्रक्रिया के द्वारा 'लम्बवत् सामाजिक गतिशीलता' संभव है यानि कि कोई भी निम्न जाति इस प्रक्रिया को अपनाकर अपनी स्थिति को ऊँचा उठा सकती है। इस संदर्भ में समाजशास्त्री डी. एन. मजूमदार ने अपनी पुस्तक 'कास्ट एंड कम्युनिकेशन इन एन इंडियन विलेज' में लिखा है, ''सैद्धांतिक एवं केवल सैद्धान्तिक रूप में ही ऐसा होता है जब हम विशिष्ट मामलों पर ध्यान देते हैं तो जाति गतिशीलता संबंधी हमारा ज्ञान एवं अनुभव ऐसी सैद्धान्तिक मान्यता की दृष्टि से सही नहीं प्रतीत होता...''

संस्कृतीकरण की अवधारणा को सांस्कृतिक परिवर्तन की स्पष्ट व्याख्या न मानते हुए एफ. जी. बैली ने अपनी पुस्तक 'कास्ट एण्ड द इकोनोमिक फ्रण्टियर' में कहा है कि ''संस्कृतीकरण की प्रक्रिया के द्वारा सांस्कृतिक परिवर्तन की स्पष्ट व्याख्या नहीं की जा सकती।''

विभिन्न समाजशास्त्रियों द्वारा संस्कृतीकरण के अवधारणात्मक पहलुओं पर आलोचनात्मक टिप्पणियों के अलावा अनेक अन्य स्तरों पर भी इसकी आलोचना की गई। विशेषकर इस तथ्य पर कि संस्कृतीकरण की अवधारणा अप्रत्यक्ष रूप से समाज के उस प्रारूप को उचित बताती है जो अपवर्जन और असमानता पर आधारित है। इस अवधारणा से ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च जाति द्वारा निम्न जाति के प्रति भेदभाव, एक प्रकार का विशेषाधिकार है। इस तुच्छ दृष्टिकोण के साथ स्वाभाविक रूप से समानता के भाव की कल्पना करना संभव नहीं है।

असमानता का भेद इस रूप में भी और भी अधिक स्पष्ट होता है कि इस अवधारणा का मूल भाव उच्च जाति की जीवनशैली को उत्तम मानना है अत: उच्च जाति के लोगों की जीवनशैली को अनुकरणीय मानना उचित ठहराया गया है या ये कहें कि ऐसी इच्छा रखना स्वाभाविक वृत्ति है।

इन समस्त आलोचनाओं के पश्चात् भी हम संस्कृतीकरण की अवधारणाक ोए कि सरेस ेख ारिजन हींक रस कतेक योंकिभ ारतीय सामाजिक व्यवस्था को समझने विशेषकर विभिन्न जातियों के मध्य पायी जाने वाली सामाजिक-संस्कृतिक गतिशीलता को एक विस्तृत रूप से विवेचित करने में इसने सहयोग दिया है।

धर्मनिरपेक्षीकरण

धर्मनिरपेक्षीकरण को परिभाषित करना दुष्कर कार्य है क्योंकि धर्म की अवधारणा को भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण से समझाया गया है। अर्थात् धर्म का भिन्न-भिन्न प्रकार से निर्वचन किया गया है। धर्म की व्याख्या को लेकर विद्वानों की कभी भी एक राय नहीं रही है। ब्रायन आर. विल्सन ने धर्मनिरपेक्षीकरण की व्याख्या करते हुए कहा ''यह एक ऐसी प्रक्रिया को इंगित करती है जिसके अंतर्गत विभिन्न सामाजिक संस्थाएँ, धार्मिक अवधारणाओं की पकड़ या प्रभाव से बहुत हद तक मुक्त हो जाती है।'' अर्थात् धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया के अंतर्गत प्रतिदिन के जीवन पर धार्मिक नियंत्रण का कम होना, कर्मकाण्डीय प्रक्रिया का तर्क द्वारा स्थानापन्न किया जाना, धार्मिक विश्वासों के प्रति विरोधात्मक स्थितियों का विकास शामिल किया जाता है।

धर्मनिरपेक्षीकरण की व्याख्या– धर्मनिरपेक्षीकरण के सम्बन्ध में समाजशास्त्रियों ने कहा कि यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत धार्मिक विचार, रिवाज एवं संस्थाएँ अपनी सामाजिक महत्ता खो देती हैं। भारतीय संदर्भ में, धर्मनिरपेक्षीकरण को स्पष्ट करते हुए एम. एन. श्रीनिवास कहते हैं ''धर्मनिरपेक्षीकरण शब्द में यह बात निहित है कि जिसे पहले धार्मिक माना जाता था, वह अब वैसा नहीं माना जाता और उसमें विभेदीकरण की एक प्रक्रिया भी निहित है। जिसके परिणामस्वरूप समाज के विभिन्न आर्थिक, राजनीतिक, कानूनी और नैतिक पक्ष एक दूसरे के मामले में अधिकाधिक 'सावधान' होते जाते हैं।''

श्रीनिवास द्वारा दी गई धर्मनिरपेक्षीकरण की परिभाषा में तीन बातें मुख्य हैं–

1. धार्मिकता में कमी– श्रीनिवास के अनुसार जनमानस में जैसे-जैसे धर्मनिरपेक्षता या लौकिकता की भावना आगे बढ़ती है वैसे-

वैसे लोगों की धार्मिक भावनाओं में सरलता आती है अर्थात् धार्मिक कठोरता के भाव लुप्त होने लगते हैं।

2. तार्किक चिन्तन की भावना में वृद्धि– परम्परागत समाज में व्यक्ति, धार्मिक विश्वासों एवं परम्पराओं से ही संचालित होता है उसकी जीवनशैली, गतिविधियाँ एवं समस्त कार्यप्रणाली का केन्द्र बिन्दु धार्मिक विश्वास होता है। यह स्पष्ट है कि धार्मिक विश्वासों का तर्क के आधार पर विश्लेषण संभव नहीं है। ज्ञान विज्ञान के प्रसार से समाज में तार्किकता में वृद्धि होती है।

3. विभेदीकरण की प्रक्रिया– एम. एन. श्रीनिवास ने धर्मनिरपेक्षीकरण के सम्बन्ध में यह स्पष्ट किया कि जैसे-जैसे लौकिकीकरणक ापि्रक्रियाब ढ़ेगीस माजम ें विभेदीकरणब ढ़ताच ला जाएगा। परम्परागत समाज में धर्म सामाजिक जीवन का अंग है, लेकिन विभेदीकरण के कारण समाज के विभिन्न पहलुओं जैसे राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं कानूनी व्यवस्था एक दूसरे से पृथक हो जाते हैं।

धर्मनिरपेक्षीकरण के लक्षण–

1. धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया के अंतर्गत इहलौकिकता में जन साधारण का विश्वास बढ़ता जाता है एवं अलौकिक तथा अधिप्राकृतिक सत्ता के प्रति आस्था क्षीण होती जाती है।
2. धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया में तर्कयुक्त चिंतन, स्वतंत्रता एवं विचारों पर बल होता है। परम्परागत विचारों को तर्क की कसौटी पर बिना झांके स्वीकार नहीं किया जाता है।
3. जीवन की समस्याओं के समाधान हेतु धर्म के मार्ग को अपनाने के लिए बजाय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के मार्ग का चुनाव किया जाता है। अर्थात् मानव जीवन के अध्ययन तथा समस्याओं के समाधान हेतु तार्किक एवं वैज्ञानिक सिद्धांतों में विश्वास पर बढ़ोतरी तथा धार्मिक विश्वासों का क्षीण होना है।
4. इस प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण लक्षण धर्म की सिद्धांतों को व्यावहारिक प्रक्रियाओं में परिवर्तित करना है, जिससे वह समाज के सदस्यों की बदलती आवश्यकताओं एवं समाज की बदलती स्थिति के अनुरूप स्वीकार्य हो सके।

धर्मनिरपेक्षीकरण के उद्भव की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि– धर्मनिरपेक्षीकरण का उद्भव यूरोप के दैनिक जीवन में धर्म या चर्च के प्रभाव के क्षय के रूप में हुआ माना जाता है। मध्यकाल का यूरोपीय समाज मूलत: एक धर्म प्रधान समाज था एवं सामाजिक जीवन की समस्त गतिविधियाँ धर्म से नियंत्रित होती थी,परन्तु स्थितियां जनसाधारण के लिए तब बहुत अधिक पीड़ादायक हो गई जब धर्म और राज्य के बीच के गठबंधन से धर्म में अनेक रूढ़ियाँ तथा कुरीतियाँ विकसित हो गईं, जिसने धर्म और राज्य द्वारा किए जाने वाले शोषण को अप्रत्यक्ष रूप से वैधता प्रदान की।

यूरोप के सामाजिक जीवन में धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया, को बल देने वाली अनेक घटनाएँ थीं, जिन्होंने धर्म के स्थान पर तर्क तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण को स्थापित करने की चेष्टा की।

धर्मनिरपेक्षीकरण में पुनर्जागरण आंदोलन ने एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में कार्य किया पुनर्जागरण आंदोलन ने तर्क संगत ज्ञान में वृद्धि को संभव बनाया, जिससे ज्ञान के क्षेत्र में पुनर्व्याख्याएँ आरम्भ हुई तथा ज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र में तर्क संगत खोज का दौर शुरू हुआ।

यूरोप की वैज्ञानिक क्रांति ने धर्म के वर्षों से स्थापित एक छत्र साम्राज्य को भेद दिया। तर्कसंगत, पद्धतिबद्ध तथा प्रयोगसिद्ध ज्ञान के महत्व ने पारलौकिक व्याख्याओं एवं धारणाओं को शनै: शनै: क्षीण करना प्रारम्भ कर दिया। इस क्रांति ने प्रकृति एव विश्व में घटित सभी घटनाओं का तारतम्य, धर्म से जोड़े जाने की परम्परा को तोड़ा और उसके स्थान पर वस्तुनिष्ठ एवं तर्कसंगत ज्ञान में वृद्धि हुई।

ब्रायन विल्सन ने अपनी पुस्तक में, साम्यवाद जैसी विचारधारा और ट्रेड यूनियन जैसे संगठनों के विकास को भी धर्मनिरपेक्षीकरण के उद्भव के कारण के रूप में स्वीकार किया। उन्होंने यह माना कि ऐसे संगठनों तथा विचारधाराओं ने पुरातन धार्मिक व्याख्याओं को चुनौती दी तथा तर्कसंगत विचारों को संरक्षण दिया।

भारत में धर्मनिरपेक्षीकरण के कारक

I. सामाजिक व धार्मिक आंदोलन– साामाजिक व धामिक आंदोलनों के उद्भव का उद्देश्य ही परंपरागत धार्मिक रीति रिवाजों के उस स्वरूप का विरोध करना था जो तार्किकता से परे, मानव जीवन को कष्टकारी बना रहे थे, विशेषकर मानवीय समानता के विरोधी तत्व। इन आंदोलनों ने धार्मिक कुरीतियों का विरोध करते हुए समानता, मानवता एवं मानवीय अधिकारों को स्थापित करने हेतु, वैज्ञानिकता एवं तार्किकता का आधार लिया जिसके फलस्वरूप, जनमानस की रुचि स्वतंत्रता एवं तर्कयुक्त चिंतन की ओर बढ़ी।

II. पश्चिमीकरण– पश्चिमीकरण ने भारत की सामाजिक एवं सांस्कृतिक व्यवस्था के कई पक्षों को प्रभावित किया। विशेषकर धर्म, कला, साहित्य तथा सामाजिक जीवन को। पश्चिमीकरण के प्रभाव के चलते आम व्यक्ति का जीवन के प्रति दृष्टिकोण परिवर्तित हुआ। उसका अलौकिकए वंअ धिप्राकृतिकस त्ताके प ्रति वश्वासक मह ुआत था इहलौकिकता में विश्वास बढ़ा।

III. धार्मिक संगठनों का अभाव– लौकिकीकरण के विकास में धार्मिक संगठनों के अभाव ने एक महत्वपूर्ण कारक के रूप में कार्य किया। श्रीनिवास का भी यह मानना था कि चूँकि हिंदू धर्म का कोई एक केन्द्रीय देशव्यापी संगठन तथा उसका कोई प्रधान नहीं रहा जो देश के सभी सदस्यों को समान रूप से धार्मिक स्तर पर, एक केन्द्रीय मंच पर संचालित एवं नियन्त्रित कर सके इसलिए उनके विचारों पर बाहरी प्रभावी

ताकतों का प्रभाव तेजी से बढ़ा।

IV. नगरीकरण– श्रीनिवास का मानना है कि लौकिकीकरण की प्रक्रिया गाँवों की तुलना में शहरों में, अशिक्षित की तुलना में शिक्षित लोगों के बीच ज्यादा तेजी से चलती है ऐसा इसलिए होता है क्योंकि गाँव की अपेक्षाकृत शहरों में वैज्ञानिक तथा तर्कपूर्ण चिंतन अधिक प्रभावी होता है।

V. यातायात के संचार के साधनों में उन्नति– आवागमन एवं संचार के साधनों ने दूरस्थ लोगों को समीप ला दिया। सहजता से आवागमन एवं संचार के साधनों से, बुद्धिजीवियों एवं राष्ट्रवादियों के विचारों का समस्त भारत में सम्प्रेषण परम्परा की बेड़ियों में जकड़े समाज में एक क्रांतिकारी कदम सिद्ध हुआ। धर्म, जाति एवं राज्य के नाम पर विभक्त लोग करीब आए। इस सान्निध्य ने नवीन विचारों को प्रचारित एवं प्रसारित किया, जिससे लौकिकीकरण को बल मिला।

V. मध्यम वर्ग का उदय- देश में व्यापार एवं वाणिज्य के विकास तथा औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप मध्यम वर्ग का उदय हुआ। इस मध्यमवर्ग ने अपने अस्तित्व को स्थापित करने की प्रक्रिया में उन परम्परागत विचारधाराओं का विरोध किया, जिनके मूल में धार्मिक विश्वास था। वे एक ऐसी व्यवस्था के प्रति चेतन थे जो तार्किक और वैज्ञानिक विचारधारा पर खड़ी हो।

भारतीय समाज पर धर्मनिरपेक्षीकरण का प्रभाव

एम.ए न.श्र ीनिवासन ेअ पनीप ुस्तक' सोशलच ेंजइ नम ॅर्डन इंडिया' में धर्मनिरपेक्षीकरण के संदर्भ में हुए अनेक परिवर्तनों की चर्चा की है। श्रीनिवास का विश्वास था कि धर्मनिरपेक्षीकरण ने पवित्रता तथा अपवित्रता की धारणा को परिवर्तित किया। धर्मनिरपेक्षीकरण ने व्यक्ति की संकुचित मानसिकता को वृहद किया। जनमानस के जीवन का केन्द्र बिन्दु शुद्धि-अशुद्धि की भावना से कहीं अधिक स्व: विकास हो गया। धन, सत्ता एवं वर्चस्व प्राप्ति की आशंकाएँ बलवती हो गई जिसने जातिगत भेदभाव को शिथिल कर दिया।

जनसाधारण का विश्वास अलौकिक सत्ता से कहीं अधिक इहलौकिकता की ओर बढ़ा। इसका तात्पर्य यह नहीं था कि भक्ति और श्रद्धा का भाव पूर्णत: क्षीण हो गया। अब ईश्वर प्राप्ति का मार्ग, व्यक्ति, मंदिर पूजन से कहीं अधिक मानव के माध्यम से प्राप्त करने के प्रति चैतन्य हुआ और यही कारण रहा कि शिक्षा संस्थाओं, आश्रमों, चिकित्सालयों तथा समाजसेवी संगठनों को लोगों ने अधिकाधिक दान देना शुरू किया।

धर्मनिरपेक्षीकरण के फलस्वरूप देश की ग्रामीण व्यवस्था भी प्रभावित हुई। समाज के प्रभुत्वशाली वर्ग को सदियों से पंच मानने की परम्परा का हनन हुआ। श्रीनिवास ने कहा है, ग्रामीण समुदायों में राजनीतिकरण की प्रक्रिया का आरम्भ हुआ।

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि धर्मनिरपेक्षीकरण ने सामाजिक विचारधाराओं की पुनर्व्याख्या की। तर्कसंगत ज्ञान का महत्व बढ़ा। धार्मिक व्याख्याओं को तर्क के आधार पर आंका जाने लगा।

उत्तर-आधुनिकीकरण

भारतीय समाज में उत्तर-आधुनिकीकरण के संदर्भ में गंभीरता से विचार किया जाए परन्तु उससे पूर्व हमें यह समझने की आवश्यकता है कि आधुनिकीकरण क्या है? और आधुनिकीकरण को तभी समझा जा सकता है जब हम जाने कि 'आधुनिकता' क्या है?

रुडॉल्फ और रुडॉल्फ ने इस सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट करते हुए कहा ''आधुनिकता का मतलब ये समझ में आता है कि इसके समक्ष सीमित-संकीर्ण स्थानीय दृष्टिकोण कमजोर पड़ जाते हैं और सार्वभौमिक प्रतिबद्धता और विश्वजनीय दृष्टिकोण (यानी कि समूचे विश्व का नागरिक होना) ज्यादा प्रभावशाली होता है, इसमें उपयोगिता, गणना और विज्ञान की सत्यता को भावुकता, धार्मिक पवित्रता और अवैज्ञानिक तत्वों के स्थान पर महत्व दिया जाता है, इसके प्रभाव में सामाजिक तथा राजनीतिक स्तर पर व्यक्ति को प्राथमिकता दी जाती है न कि समूह को, इसके मूल्यों के मुताबिक मनुष्य ऐसे समूह-संगठन में रहते और काम करते हैं जिसका चयन जन्म के आधार पर नहीं बल्कि इच्छा के आधार पर होता है। इसमें भाग्यवादी प्रवृत्ति के ऊपर ज्ञान तथा नियंत्रण क्षमता को प्राथमिकता दी जाती है और यही मनुष्य को उसके भौतिक तथा मानवीय पर्यावरण से जोड़ता है; अपनी पहचान को चुनकर अर्जित किया जाता है न कि जन्म के आधार पर; इसका मतलब यह भी है कि कार्य को परिवार, गृह और समुदाय से अलग कर नौकरशाही संगठन में शामिल किया जाता है...।''

स्पष्ट है कि आधुनिकता का अर्थ एक ऐसी विचारधारा से है जो कि किसी सीमा में नहीं बंधी हो। व्यक्ति की सोच, उसके कार्य किसी परिपाटी से न बंधे होकर, उसकी स्वयं की इच्छा से निर्धारित होते हों।

आधुनिकता का अर्थ स्पष्ट होने पर हमें आधुनिकीकरण को समझना सहज होगा।

आधुनिकीकरण की अवधारणा– आधुनिकीकरणक ेिए क निश्चित परिभाषा देना सहज नहीं है क्योंकि विभिन्न समाज विज्ञानियों ने इस शब्द को विभिन्न अर्थों एवं संदर्भों में प्रयुक्त किया है। आधुनिकीकरण कोई जड़ वस्तु नहीं है। यह एक प्रक्रिया है। मूरे ने अपनी पुस्तक 'सोशल चेंज' में लिखा है कि ''आधुनिकीकरण के अन्तर्गत के परम्परागत अथवा पूर्ण आधुनिक समाज का पूर्ण परिवर्तन उस प्रकार की औद्योगिकी एवं उससे सम्बन्धित सामाजिक संगठन के रूप में हो जाता है जो पश्चिमी दुनिया के विकसित, आर्थिक दृष्टि से समृद्धशाली और राजनैतिक दृष्टि से अपेक्षाकृत अधिक स्थिर राष्ट्रों में पाई जाती है।'' वहीं योगेन्द्र सिंह के अनुसार, ''आधुनिकीकरण एक संस्कृति प्रत्युत्तर के रूप में है जिनमें उन विशेषताओं का समावेश है जो प्राथमिक रूप से विश्वव्यापक एवं उद्विकासीय है।''

योगेन्द्र सिंह के विचारानुसार ''आधुनिकीकरण को सांस्कृतिक-सर्वव्यापी जैसा कहा जा सकता है। आधुनिकीकरण का आशय केवल प्राविधिक उन्नति से ही नहीं है, बल्कि वैज्ञानिक विश्व दृष्टिकोण,

समकालीन समस्याओं के लिए मानवीकी का आन्तरीकरण एवं विज्ञान का दार्शनिक दृष्टिकोण होना आवश्यक है।''

स्पष्ट है कि आधुनिकीकरण, आधुनिक एवं नवीन ज्ञान, विश्वास, मूल्य एवं बौद्धिकता को महत्ता देना है।

आधुनिकीकरण की विशेषताएँ– अलातास ने आधुनिकीकरण के सम्बन्ध में कहा था यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके द्वारा आधुनिक वैज्ञानिक ज्ञान का समाज में प्रचार एवं प्रसार होता है, जिससे समाज में व्यक्तियों के स्तर में सुधार होता है और समाज अच्छाई की तरफ बढ़ता है।

लर्नर ने अपनी पुस्तक 'दि पासिंग ऑफ ट्रेडीशनल सोसायटी' में आधुनिकीकरण की सात विशेषताओं का उल्लेख किया है–

1. वैज्ञानिक भावना।
2. नगरीकरण में वृद्धि।
3. संचार साधनों में क्रांति।
4. शिक्षा का प्रसार।
5. राजनैतिक साझेदारी या मतदान व्यवहार में वृद्धि।
6. प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि।
7. व्यापक आर्थिक साझेदारी।

उपर्युक्त विशेषताओं का केन्द्र बिन्दु जीवन के सभी पक्षों में सुधार, दृष्टिकोण की व्यापकता,नवीनता के प्रति लचीलापन एवं परिवर्तन के प्रति स्वीकारोक्ति है।

हमें यह समझना होगा कि आधुनिकीकरण एक प्रक्रिया है। इस सम्बन्ध में डब्ल्यू जे. स्मिथ ने जोर देते हुए कहा है कि 'आधुनिकीकरण कोई उद्देश्य नहीं है बल्कि एक प्रक्रिया है, वह कोई अपनाई जाने वाली वस्तु नहीं है कि जिसे कोई रखता हो, बल्कि यह वह है जिसे अपनाया जाता है, चाहे अच्छी हो या बुरी।'

उत्तर-आधुनिकीकरण की अवधारणा- उत्तर-आधुनिकीकरण को आधुनिकीकरण के एक विकल्प के तौर पर देखा जा रहा है। सर्वप्रथम अरनाल्ड टोयन्बी ने अपनी पुस्तक 'पोस्ट मॉडर्न कन्डीशन' में 'उत्तर-आधुनिकता' की अवधारणा को प्रयोग में लिया। समाज वैज्ञानिकों का मानना है कि समाज उत्तर आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में दाखिल हो चुका है।

आधुनिकीकरण के 20वीं शताब्दी के प्रथम भाग में आधुनिक तकनीकी का विकास हुआ और दुनिया को एक आधुनिक आकार मिला। शताब्दी का दूसरा भाग उत्तर आधुनिकीकरण का है।

समाजशास्त्रियों ने उत्तर आधुनिकीकरण को प्रक्रियात्मक ज्ञान एवं संस्कृति की एक दशा मानते हुए यह स्पष्टत: इंगित किया कि इसमें आधुनिक सामाजिक संस्थाएँ कमजोर होती जाती है तथा यह एक भूमण्डलीय समाज का निर्माण करती है।

समाज वैज्ञानिक ने उत्तर-आधुनिकीकरण को उत्तर-आधुनिकता का प्रकार्यात्मक पक्ष मानते हुए उत्तर-आधुनिकता के संदर्भ में विस्तार से चर्चा की है। समाजशास्त्री रिचार्ड गोट ने उत्तर-आधुनिकता को परिभाषित करते हुए कहा, ''उत्तर-आधुनिकता आधुनिकता से मुक्ति दिलाने वाला एक स्वरूप है। यह एक विखंडित आंदोलन है, जिसमें सैकड़ों फूल खिल सकते हैं। उत्तर-आधुनिक में बहु-संस्कृतियों का निवास हो सकता है।''

उत्तर-आधुनिकता का तात्पर्य एक ऐतिहासिक काल से है। यह काल आधुनिकता के काल की समाप्ति के बाद प्रारम्भ होता है। उत्तर-आधुनिकतावाद का संदर्भ सांस्कृतिक तत्वों से है। यह सम्पूर्ण अवधारणा सांस्कृतिक है। उत्तर-आधुनिकता आधुनिकता के बाद का, समाज का विकास है।

डेविड हारवे ने अपनी पुस्तक 'कन्डीशन ऑफ पोस्ट मोडर्निटी' में उत्तर-आधुनिकता के सम्बन्ध में जो भी विश्लेषण किए उसके आधार पर निम्नांकित लक्षण को विवेचित किया जा सकता है–

1. उत्तर-आधुनिकतावाद एक सांस्कृतिक पैराडिम है, इसमें आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक प्रक्रियाओं का सम्मिश्रण है। इसकी अभिव्यक्ति जीवन की विभिन्न शैलियों में यथा साहित्य, दर्शन कला आदि में दृष्टिगोचर होता है।
2. उत्तर-आधुनिकता विखण्डन में दिखाई देती है। यह समानता की अपेक्षा विविधता को स्वीकार करती है।
3. उत्तर-आधुनिकता बहुआयामी है। यह एक ऐसी संस्कृति है, जिसमें बहुलता है। उत्तर-आधुनिकता के केन्द्र अपेक्षित महिलाएँ, हाशिए पर रहने वाले लोग हैं।
4. उत्तर-आधुनिकता का आग्रह है कि स्थानीय स्तर पर हुई समस्त प्रक्रियाओं को विश्लेषित किया जाना चाहिए।
5. जेमेसन, जो कि मार्क्सवादी उत्तर-आधुनिकवेत्ता है, का कहना है कि पूँजीवादी विकास का एक बहुत बड़ा चरण उत्तर-आधुनिकता की संस्कृति है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि उत्तर-आधुनिकता संस्कृति प्रधान है इसी संस्कृति का अंग अति उपभोक्तावाद है। उत्तर-आधुनिकता कोई नवीन जीवनशैली नहीं है और न ही कोई नवीन विचारधारा। समाज की जटिलता तथा औद्योगीकरण की उन्नत अवस्था ने विचारों को कहीं अधिक तर्कसंगत बना दिया। इसलिए समाज का उत्तर आधुनिक स्वरूप में परिवर्तित होना अपरिहार्य हो गया। उत्तर-आधुनिकतावादियों का यह विश्वास है कि पर्यावरण की विकट स्थिति आधुनिक समाज की देन है। मैक्कीबेन का कहना है कि 'आधुनिक समाज ने प्रकृति का ही अंत कर दिया है।' उच्च तकनीकी, करियर-भावना, अधिकारी तंत्र, उदार प्रजातंत्र और अवैयक्तिक जीवन आधुनिकीकरण की देन रहे हैं। सत्य तो यह है कि आधुनिकीकरण ने मनुष्य जीवन का यंत्रीकरण कर दिया है वह क्या पहनेगा, कैसे अभिवादन करेगा यहाँ तक कि क्या पढ़ेगा, ने उसके जीवन को पीड़ादायक बना दिया है। आधुनिकता के अकादमिक अनुशासन, नियबद्ध जीवन पद्धति को तोड़ने का प्रयास ही उत्तर-आधुनिकता है।

सरल शब्दों में यह कहा जा सकता है कि उत्तर-आधुनिकता को

सभीस माजशास्त्रियोंने स्वीकार्र कयाह ोए सान हींह ै।स मकालीन समाजशास्त्री जो प्रकार्यवाद और मार्क्सवाद के प्रणेता हैं, इसे स्वीकार नहीं करते। कैलिनिकोस ने अपनी पुस्तक 'अगेंस्ट पोस्ट मोडरनिटी ए मार्क्सीस्ट क्रिटिक' में यह बताने की चेष्टा की कि उत्तर-आधुनिकता और कुछ न होकर केवल यह बताती है कि समाज के कुछ सफेदपोश लोग अत्यधिक उपभोग करते हैं और इस अर्थ में यह अवधारणा एक पूंजीवादी अवधारणा है। सारांशत: समाजशास्त्र के एक विषय के रूप में अब तक की यात्रा के इस पड़ाव पर उत्तर-आधुनिकता के सम्बन्ध में कोई निर्णायक समीक्षा करना दुष्कर कार्य है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

हमने इस अध्याय में सांस्कृतिक परिवर्तन एवं संबंधित अवधारणाओं के बारे में जाना उनको स्मरण करने की आवश्यकता है–

- जब भी किसी समाज की संरचनात्मक व्यवस्था में परिवर्तन होता है तो स्वाभाविक रूप से सांस्कृतिक परिवर्तन भी होता है।
- समाज सुधारकों के अथक प्रयासों ने 19वीं सदी के सांस्कृतिक परिवर्तनों में एक महत्ती भूमिका निभाई।
- उन्नीसवीं सदी में उदारवाद एवं स्वतंत्रता के नवीन विचार, परिवार रचना एवं विवाह से सम्बन्धित क्रांतिकारी विचारों ने सामाजिक 'संस्तरण में स्त्री की प्रस्थिति को ऊँचा किया।'
- अंग्रेजों के शासन के फलस्वरूप भारतीय समाज और संस्कृति में होने वाले परिवर्तनों को श्रीनिवास ने पश्चिमीकरण नाम दिया।
- पश्चिमीकरण के फलस्वरूप जातिगत भेदभाव में शिथिलता आई, साथ ही भाषायी चेतना और प्रादेशिकता के बीज प्रस्फुटित हुए।
- श्रीनिवास ने दक्षिण भारत के कुर्ग लोगों के सामाजिक और आर्थिक जीवन के विश्लेषण के लिए 1952 में संस्कृतीकरण की अवधारणा का सर्वप्रथम प्रयोग किया।
- श्रीनिवास ने जाति व्यवस्था को 'उर्ध्वमुखी गतिशीलता' के आधार पर विवेचित किया है। किसी भी समूह का संस्कृतीकरण उसकी प्रस्थिति को स्थानीय जाति संस्तरण में उच्चता की तरफ ले जाता है।
- धर्मनिरपेक्षीकरण की प्रक्रिया के अंतर्गत प्रतिदिन के जीवन पर धार्मिक नियंत्रण का कम होना, कर्मकाण्डीय प्रक्रिया का तर्क द्वारा स्थानापन्न किया जाना है।
- भारत में सामाजिक व धार्मिक आंदोलन, पश्चिमीकरण, धार्मिक संगठनों के अभाव, नगरीकरण तथा यातायात एवं संचार साधनों में उन्नति ने धर्मनिरेक्षीकरण को बढ़ावा दिया।
- धर्मनिरपेक्षीकरण ने पवित्रता और अपवित्रता की धारणा को परिवर्तित किया।
- 'आधुनिकता' का सम्बन्ध केवल प्राविधिक उन्नति से नहीं है बल्कि वैज्ञानिक, विश्व दृष्टिकोण, समकालीन समस्याओं के लिए मानवीकी का अंतरीकरण एवं विज्ञान के दार्शनिक दृष्टिकोण से भी है।
- आधुनिकीकरण के 20वीं शताब्दी के प्रथम भाग में आधुनिक तकनीकी का विकास हुआ। शताब्दी का दूसरा भाग उत्तर आधुनिकीकरण का है।
- उत्तर-आधुनिकतावाद का संदर्भ सांस्कृतिक तत्वों से है। यह सम्पूर्ण अवधारणा सांस्कृतिक है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. मुस्लिम महिलाओं की राष्ट्रस्तरीय संस्था 'अंजुमन-ए-ख्वातीन-ए-इस्लाम' की स्थापना किस वर्ष हुई?
   (अ) 1920 (ब) 1916
   (स) 1914 (द) 1918
2. पश्चिमीकरण का प्रभाव जीवन के किस क्षेत्र पर पड़ा?
   (अ) सांस्कृतिक क्षेत्र (ब) राजनीतिक क्षेत्र
   (स) धार्मिक क्षेत्र (द) उपर्युक्त सभी
3. भारत में धर्म निरपेक्षीकरण के कारक कौन से हैं?
   (अ) पश्चिमीकरण
   (ब) सामाजिक व धार्मिक आंदोलन
   (स) नगरीकरण
   (द) उपर्युक्त सभी
4. 'सोशल चेंज एन मॉडर्न इंडिया' पुस्तक के लेखक कौन हैं?
   (अ) एबरक्रॉमी (ब) जी.एस. घुर्ये
   (स) एम.एन. श्रीनिवास (द) डी.एन. मजूमदार
5. लर्नर ने आधुनिकीकरण की किस विशेषता का उल्लेख किया है?
   (अ) शिक्षा का प्रसार (ब) नगरीकरण में वृद्धि
   (स) वैज्ञानिक भावना (द) उपर्युक्त सभी
6. 'पोस्ट मॉडर्न कंडीशन' पुस्तक के लेखक कौन हैं?
   (अ) अरनाल्ड टॉयन्बी (ब) डेविड हारवे
   (स) एम.एन. श्रीनिवास (द) रिचार्ड गोट

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. किस समाज सुधारक ने अखिल भारतीय मुस्लिम महिला सम्मेलन में, बहु विवाह के विरुद्ध प्रस्ताव प्रस्तुत किया।
2. 'अंग्रेजी शासन के कारण भारतीय समाज और संस्कृति में बुनियादी और स्थायी परिवर्तन हुए।...' यह कथन किस समाजशास्त्री का है?
3. पश्चिमीकरण ने समाज में किस नवीन वर्ग को जन्म दिया?
4. श्रीनिवास ने पश्चिमीकरण के कितने स्तरों की चर्चा की है?
5. समाजशास्त्र की कौन सी अवधारणा जाति प्रथा संस्तरण पर आधारित सामाजिक स्तरीकरण की व्याख्या करती है।
6. किस समाजशास्त्री ने जाति व्यवस्था को 'ऊर्ध्वमुखी गतिशीलता' के आधार पर विवेचित किया था?
7. हिस्ट्री ऑफ कास्ट इन इंडिया पुस्तक के लेखक कौन हैं?

8. ‘कास्टए ंडक म्युनिकेशनइ नए नइ ंडियर्नावलेज’प ुस्तकके लेखक कौन हैं?
9. धर्मनिरपेक्षीकरण ‘एक ऐसी प्रक्रिया को इंगित करती है जिसके अंतर्गत विभिन्न सामाजिक संस्थाएँ, धार्मिक अवधारणाओं की पकड़ या प्रभाव से बहुत हद तक मुक्त हो जाती है।’ यह कथन किस विद्वान ने दिया?
10. ‘आधुनिकता का मतलब ये समझ में आता है कि इसके समक्ष सीमित संकीर्ण स्थानीय दृष्टिकोण कमजोर पड़ जाते हैं...।’ यह कथन किसका है?
11. ‘आधुनिकीकरण कोई उद्देश्य नहीं है बल्कि एक प्रक्रिया है, कोई अपनाई जाने वाली वस्तु नहीं है बल्कि उसमें सम्मिलित होना है...’ यह कथन किस विद्वान का है?
12. ‘आधुनिक समाज ने प्रकृति का ही अंत कर दिया है।’ यह कथन किस विद्वान का है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. ‘संरचनात्मक परिवर्तन’ शब्द किस परिवर्तन को बताता है?
2. औपनिवेशिक शासन के प्रभाव की उत्पत्ति किन दो घटनाओं की परिणति है जो कि परस्पर सम्बन्धित हैं?
3. सतीश सबरवाल ने औपनिवेशिक भारत में आधुनिक परिवर्तन के किन तीन पक्षों की चर्चा की?
4. संचार के उन साधनों के नाम लिखे जिन्होंने समाज सुधारकों एवं राष्ट्रवादी नेताओं के विचारों को प्रचारित और प्रसारित किया।
5. पश्चिमीकरण का अर्थ लिखिए।
6. पश्चिमीकरण का प्रभाव जीवन के किन क्षेत्रों पर पड़ा?
7. भारतीय संस्कृति की भोजन–शैली को पश्चिमीकरण ने किस रूप में प्रभावित किया।
8. श्रीनिवास ने संस्कृतीकरण का सिद्धांत देने से पूर्व किस समाज का अध्ययन किया था?
9. एस.वी. केतकर ने संस्कृतीकरण की क्या परिभाषा दी?
10. संस्कृतीकरण एक प्रोत्साहन के तीन कारकों का उल्लेख करें।
11. लम्बवत सामाजिक गतिशीलता से क्या तात्पर्य है?
12. धर्मनिरपेक्षीकरण के सम्बन्ध में एवरक्रामी ने क्या कहा?
13. श्रीनिवास ने धर्मनिरपेक्षीकरण की परिभाषा में तीन कौन से मुख्य तत्वों का उल्लेख किया।
14. ब्रायन विल्सन ने धर्मनिरपेक्षीकरण के उद्‌भव के किन मुख्य दो कारकों का उल्लेख किया है?
15. योगेन्द्र सिंह द्वारा आधुनिकीकरण की दी गई परिभाषा लिखें।
16. लर्नरद्व ाराअ ाधुनिकीकरणक ेद ेग ईव िशेषताओंम ेंस े च ार विशेषताओं का उल्लेख करें।
17. उत्तर–आधुनिकीकरण क्या है संक्षिप्त में लिखें।
18. उत्तर–आधुनिकता की अवधारणा के सम्बन्ध में कोलिनिकोस ने क्या लिखा है?

निबन्धात्मक प्रश्न–

1. समाज सुधार आंदोलन किस प्रकार उन्नीसवीं सदी में, भारत में सांस्कृतिक परिवर्तन के उत्तरदायी कारक बने, विवेचित कीजिए।
2. भारत में पश्चिमीकरण के फलस्वरूप हुई सामाजिक परिवर्तन के सम्बन्ध में विस्तार से चर्चा करें।
3. संस्कृतीकरण की अवधारणा का आलोचनात्मक विश्लेषण करें।
4. भारत में धर्मनिरपेक्षीकरण के उद्‌भव के कारकों की विस्तार से व्याख्या करें।
5. आधुनिकीकरण की विशेषताएँ बताते हुए उत्तर–आधुनिकरण के बारे में बताएँ।

उत्तरमाला

1. (स) 2. (द) 3. (द) 4. (स) 5. (द) 6. (अ)।